IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

जनता का साहित्य किसे कहते हैः मुक्तिबोध

कल्पना, हिसार

सारांष :

कुल मिलाकर कहा जाए तो कहा जा सकता है कि साहित्य समाज की उस प्रक्रिया का परिणाम है जिसमें मनुष्य की सम्पूर्ण जीवन के कार्य एवं व्यवहार शामिल हैं इसलिए साहित्य को समाज का आइना भी माना जा सकता है। साहित्य एक जीवंत शब्द है, इसमें भात, कल्पना, बुद्धि, शैली तत्त्वों का समागम होता है। इसमें इमोशन और ऐंटीमेंट की अपनी भूमिका रहती है। मुक्ति बोध इस बात को स्वीकार करते हैं कि भावनाओं की पृष्ठभूमि पर कल्पना की तूलिका से जीवन के रंग भरना ही साहित्य है परन्तु वे एक बात और कहते हैं कि जनता का साहित्य का अर्थ तुरंत ही समझ में आने वाले साहित्य से हरगिज नही होता। यदि ऐसा होता तो तोता मैना और नौटंकी के किस्से ही शुद्ध साहित्य की श्रेणी में गिने जाते। अतः सस्कृति के भाव को ग्रहण करने के लिए, बुलंदी, बरिणी के साहित्य उसके सौंदर्य की पहचान करनें के लिए शब्दों द्वारा उसका प्रस्तुतिकरण ही साहित्य है। कहनें का अर्थ भावों का परिष्कार ही साहित्य है।

कुंजी शब्द :

साहित्य, समागम, तूलिका, संस्कृति, शैली, उदात्त, परिष्कार, शैली, स्वरूप, सौंदर्य, चमत्कार, भाव जगत, पृष्ठभूमि, इमोशन, सेंटीमेंट।

जबसे शुद्ध साहित्य का अध्ययन किया है एक उक्ति बार–बार उध्ययन में सामने आती है कि साहित्य समाज का दर्पण है। साहित्यकार की निजी अनुभूतियों का पुंज समाज का दर्पण इसलिए कहलाता है कि सामाजिक परिस्थितियों में जीवन जीता हुए साहित्यकार सामाजिक अनुभूतियों की ओर प्रवृत होता है। इस प्रकार एक उद्देश्यपूर्ण निजी लेखन साहित्य इसलिए बन जाता है क्योंकि सामाजिक जीवन और सामाजिक परिस्थितियों के साथ–साथ सामाजिक संदर्भों और युग बोध को अपने साथ लेकर

चलता है। इसके उद्देश्य और उपयोगिता को समझने के लिए मम्मट के 'काव्य प्रकाश' को उक्ति प्रस्तुत है,

''काव्य यशसे, अर्धकृते, व्यवहारविदे,
सथः परवितृये कांतासम्मित तयोपदेशे।''[1]

अर्थात् यश की प्राप्ति, अर्थ की प्राप्ति, मोह की प्राप्ति, सफल प्रयोजनों में कांता का उपदेश मनुष्य को इस कार्य के लिए प्रवृत करते हुए साहित्य सृजन के उद्देश्य को रूपायित करता है।

उद्देश्य की बात तो बाद में की जाती है, पहले तो यही विचार किया जाता है कि जनता साहित्य किसे कहती है? मुक्तिबोध इस संदर्भ में स्वयं कहते हैं, ''मजेदार बात यह है कि साहित्य को मात्र व्यक्तिगत कार्य कहकर, व्यक्तिगत उत्तरदायित्व कहकर, अपने हाथ झाड़ पौंछकर साफ करने वाले ठीक वे ही लोग हैं जो जनता के लिए साहित्य का नारा बुलंद करते हैं, क्योंकि उन्हें यह मालूम नहीं कि जिन शब्दों को वो बार–बार दुहरा रहे हैं उनका मतलब क्या है?''[2]

आम पाठक या आम जन इस संदर्भ में कहता है कि मतलब साफ है, ''साहित्य शब्द अर्थ और भावनाओं की वह त्रिवेणी है जो जनहित की धारा में उच्च आदर्शों की दिशा में प्रवाहित है।''[3] कोई कहता है कि साहित्य समाज का दर्पण होना चाहिए, कोई कहता है कि साहित्य का समाज से गहरा जुड़ाव होना चाहिए, कोई कहता है कि साहित्य में समाज कल्याण निहित होना चाहिए। कोई यह भी कहता है कि साहित्य समाज में घटित विकृति, व्यवस्था के खिलाफ आवाज उठाने का काम करता है। कोई कहता है कि साहित्य के प्रयोजन के मूल में सत्यं, शिवं और सुंदरम् का विधान होना चाहिए। आदि–आदि।

हिन्दी विश्वकोश में साहित्य का अर्थ संपादक बसु नगेंद्रनाथ ने इस प्रकार व्यक्त किया है जिससे सन्दर्भ निकलते हैं, ''एकत्र होना, मिलना, किसी स्थान पर एकत्र किए हुए उपदेश, परामर्श विचार आदि, लिपि बद्ध प्रवचन, परम्परा, अनुभूति, नैतिक एवं सत्य।''[4] मानक हिन्दी कोश में साहित्य को अर्पा इस प्रकार दिया है, ''पु. (सं) साहित या साथ होने की अवस्था, एक साथ ही रहना, एक साथ ही होना या फिर भी सभी वस्तुएं जिनका संपादन हो सके या किया जा सके।''[5] शाब्दिक रूप से कुछ भी कहा जाए परन्तु साहित्य में एक समाज को देखा जा सकता है या यूं कहिए कि लघु समाज साहित्य या पर्याय कहा जाना उपयुक्त प्रयुक्त होता है। इस प्रकार जनता के लिए साहित्य का अर्थ है, ''ऐसा साहित्य जो जनता के जीवन मूल्यों को जनता के जीवन के आदर्श को यह प्रतिष्ठापित करता हो, उसे मुक्ति पद्य पर अग्रसर करता हो। इस मुक्ति पथ का अर्थ राजनैतिक से लगाकर अज्ञान मुक्ति तक है।''[6] वस्तुतः आम आदमी के लिए साहित्य का अर्थ इतना ही है कि जीवनोपयोगी लिखित सामग्री साहित्य का आधार

ही नही बल्कि स्वयं में साहित्य ही होना है। यह मानव जीवन के संदर्भों को अपने साथ लेकर चलता है और मानवीय जीवन की व्याख्या करते हुए चलता है।

जनता का साहित्य किसे कहते है? मुक्तिबोध द्वारा एक निबंध महत्त्वपूर्ण पत्रिका 'नया खून' में वर्ष 1953 में प्रकाशित हुआ, बाद मुक्तिबोध के 'नए साहित्य का सौंदर्यशास्त्र' में संकलित कर प्रकाशित करवाया गया। इस निबंध में लेखक ने साहित्य को लेकर आम आदमी की सोच के साथ साहित्य की परिधि को निर्धारित किया है। साथ ही निबंध में यह विश्लेषित भी किया है कि साहित्य सृजन एक उच्च कोटि का कार्य है। साहित्य और राजनीति दोनों अलग–अलग मार्ग के लक्ष्य है परन्तु समाज में रहते हुए साहित्य को राजनीति को प्रभावित किया है। मुक्तिबोध की मान्यता है, ''इस संपूर्ण मनुष्य सत्ता का निर्माण करने का एकमात्र तरीका राजनीति है, जिसका सहायक साहित्य है। तो वह राजनैतिक पार्टी जनता के प्रति अपना कर्त्तव्य नही पूरा करती, जो कि लेखक के साहित्य निर्माण को व्यक्तिगत उत्तरदायित्व कहकर टाल देती है''[7]

कहना संगत होगा कि यह बात एक दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति है जो लेखक गजानन माधव मुक्तिबोध का निजी विचार है। जहाँ जनता की बात की जाए तो यह कहा जा सकता है कि राजनीति के सामाजिक सरोकार तो समझ में आते है परन्तु राजनीति के साहित्यिक सरोकार को लेकर मन में संदेह उत्पन्न होता है। संत कुम्भनदास की उक्ति का उदाहरण यहा सटीक रहेगा,

''संतन को कहा सीकरी सो काम
आवत जावत पनैह्या धिसी
विसर गाजौ हरि को नाम।''[8]

वस्तुतः साहित्य में राजनीति एक दुरूह तथ्य की अभिव्यक्ति करता है। लेकिन इसका यह मतलब नही कि उसको अर्थात् राजनीति ही मान लिया जाए क्योंकि यह केवल प्रभाव है, राजनीति नही है। विदेशी साहित्य की बात की जाए तो यहा ''मार्क्स के 'दास कैपिटल' लेनिन के ग्रंथ, रोम्यां रोलां के, टालस्टाय और गोर्की के उपन्यास एक दम अशिक्षित ओर असंस्कृतों के न समझे जाए परन्तु जनता के साहित्य में तो गिने ही जाने चाहिए।''[9] वस्तुत इस प्रकार यहाँ कहा जा सकता है कि जनता की भावना और पठन की बात है। कालजयी और युग बोध समय का द्योतन नही करता, भाव का द्योतन करता है। मूल्यों का वर्णन ही साहित्य नही होता बल्कि जीवन की भावना साहित्य का आधार होती है। यह एकल अनुभूति लेखक की होती है परन्तु उसमें निहित सम्पूर्ण समाज होता है।

साहित्य शब्द क्या है इस बात पर विचार करने से पूर्व हम इस बात पर विचार करना आवश्यक समझते हैं कि साहित्य क्या है और जनता का साहित्य किसे कहते है? भाषा के माध्यम सामाजिक और

व्यक्तिगत अनुभूति से परिपूर्ण शब्दावली के माध्यम से जो लेखन किया जाता है। साहित्य में अनुभूति और अभिव्यक्ति दोनों का संयोग होता है इसलिए साहित्य की परिभाषा को पूर्ण करता है। इसमें लेखक की अनुभूति स्वयं की होकर जनता के लिए होती है। अतः जनता के साहित्य के अर्थ में स्वीकृत की जानी चाहिए।

मुक्तिबोध के शब्दों में, ''जीवन मूल्यों और जीवन आदर्शों को लेकर साहित्य निर्माण होना, यह यद्यपि व्यक्ति–व्यक्ति की लेखनी के द्वारा उत्पन्न होता है, किन्तु इसका उत्तरदायित्व मात्र व्यक्तिगत नही है सामूहिक है। जिस प्रकार प्रयोगशाला में एक वैज्ञानिक फार्मूला तैयार करने के लिए उद्यत रहता है वह फार्मूला साधारण जनता की समझ से परे की बात है परन्तु वह सबके लिए लाभदायक सिद्ध होगा, इसलिए इसी प्रकार साहित्यकार भी जानता है कि वह जनता के लिए कार्य कर रहा है। यही जनता का साहित्य है। उदाहरणतः साहित्यशास्त्र का ग्रंथ साधारण जनता की समझ में नही आता परन्तु वह साहित्यकार के लिए आवश्यक है। इसी के आधार पर लेखक और कवि जीवन के उच्च आदर्श जनता के सामने लेकर आते है।''[9] इस प्रकार बात साफ हो गयी है कि जनता का साहित्य वही होता है जो जीवन के उच्च आदर्शों को पाठक के सामने प्रस्तुत करे। जीवन में यथार्थ में आदर्श की कल्पना जीवन को उत्साहित करने का कार्य करती है। यही साहित्य शब्द में 'सनहित' की भावना प्रति स्थापित है। अस्तु साहित्य सदैव समाज की व्याख्या ही नही करता बल्कि उस समाज जिसमें वह लिखा गया है का ही नही सम्पूर्ण वैश्विक समाज का मार्ग भी परास्त करता है। मुझे तो बस इतना ही कहना कि यदि किसी लेखन दस्तावेज में सामाजिक व्यवहार का आदर्श और आदर्श प्रोत्साहन है तो वह साहित्य है और जनता का साहित्य है। इससे आगे आलोचक जो चाहे कहे।

संदर्भ सूची :

1. काव्य प्रकाश, मम्मट पृ. 119
2. नए साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, गजानन माधव मुक्तिबोध, पृ. 102
3. अल्का सक्सेना का ब्लाग का अंश
4. हिन्दी विश्वकोश, संपादक नगेंद्रनाथ बसु, पृ. 493
5. हिन्दी मानक कोश, अजीत कुमार, पृ. 621
6. नए साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, गजानन माधव मुक्तिबोध, पृ. 104
7. वही, पृ. 103
8. क्षितिज सी.बी.एस.ई., पृ. 108
9. डबरे का सूरज का बिम्ब, चंद्रकांत देवताले, पृ. 13